शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 अप्रैल 2014

वेदों में नैतिक तत्वों की वर्तमान में प्रासंगिकता

गिरिजा कुमारी (शोधार्थी)
वनस्थली विद्यापीठ,
राजस्थान, भारत

शोध संक्षेप

भारत कम से कम दस हजार साल पुराना है। जब दूसरे देशों का इतिहास आरम्भ भी नहीं हुआ था, तब हमारे पूर्वज गौरवशिखर पर पंहुच गए थे। काफी परिवर्तन के बाद भी यहाँ की परम्परा अटूट रही है। यह हमें प्राचीनकाल से जोडती है। जो दर्शन दस हजार साल पहले होता था, वही आज इक्कीसवी सदी में भी हो रहा है। प्रस्तुत शोध पत्र में प्राचीन ग्रन्थ वेदों में नैतिक तत्वों की वर्तमान में प्रासंगिकता की चर्चा की गयी है।

प्रस्तावना

वेद शब्द विद् धातु से निष्पन्न हुआ है। जिसका मूलतः अर्थ होता है ज्ञान। समस्त ज्ञान-विज्ञान से युक्त वेद ही धर्म का मूल है जो द्विजों का सर्वाधिक कल्याण करने वाले हैं। मनुस्मृति के द्वितीय अध्याय में कहा गया है,

सर्वज्ञान मयो हि सः।।1

यह कहकर वेद को सभी प्रकार के ज्ञान से युक्त घोषित किया गया है। तात्पर्य यह है कि मानव-जीवन का कोई भी पक्ष ऐसा नही है जिसका दर्शन हमें वेद में नहीं होता हो। वेद को अनन्त ज्ञान का भण्डार माना गया है। वेदों का अध्ययन करने से ज्ञात होता हैं कि ऋषियों ने मंत्रों का वर्णन बुद्धि प्रत्यक्ष तथा इन्द्रिय प्रत्यक्ष दोनों आधार पर किया है । सुप्रसिद्ध गायत्री मंत्र इसका उदाहरण है। यही कारण है कि उनमें वर्णित विषय-वस्तु सर्वतन्त्रा सिद्धान्त पर आधारित त्रिकाल सत्य और प्रायोगिक है। वस्तुतः वैदिक ऋषियों ने सृष्टि, प्रकृति व जीवन के अपने अनुभवों को काव्य के माध्यम से अभिव्यक्ति प्रदान की है। इस प्रकार कविता में विज्ञान है चारों वेद। हमारे ये 'वेद' जो सभ्यता, संस्कृति तथा ज्ञान-विज्ञान को ही महिमान्वित नहीं करते वरन् अनेक मूल्यपरक विषयों को अजस्र प्रवाहित ज्ञान गंगा के सदृश्य उद्घाटित करते हैं। देशभक्ति, अध्यात्म, नैतिक-तत्व, जीविका के साधन अनेक विषयों पर वेदों में प्रकाश डाला गया है।

नीति और नैतिक का तात्पर्य

नैतिक शब्द नीति$ठक् से व्युत्पन्न हुआ है जिसका अर्थ है नीति से युक्त। नीति मनुष्य के आचार को संयमित एवं नियोजित बनाती है। मानवता को परिष्कृत करके उसमें सुविचारों का अंकुरण करती है।

मम्मट के अनुसार

रामादिवत्प्रवर्तितव्यमं न तु रावणादिवत्।।2

इस प्रकार साहित्य में सदैव सन्मार्ग की ओर प्रेरित किया गया है। नीति साहित्य का श्रृंगार है।

नीति तत्व साहित्य की मनोहारिता में वृद्धि करते हैं। इसलिए रचनाकार स्वाभाविक रूप से इनका प्रयोग करता है। इसलिए सूक्तिपरक साहित्य हमारा मार्गदर्शन ही नहीं करता अपितु निराशा और विरक्ति के समय प्रेरणा व बल भी प्रदान करता है। सामाजिक नियमों के अनुकूल आचरण करने वाला व्यक्ति व्यवहार में सत्य, परोपकार, इत्यादि सतोगुण प्रकट करता है तो नैतिक-तत्वों का उदय अवश्यंभावी है। वेदाध्ययन से ज्ञात होता है कि वेद ऋत्, सत्य, मैत्री, एकता, असत्य से घृणा, द्वेष का नाश, आत्मोन्नति के प्रति सजगता, सौमनस्य, सर्वमंगल, परोपकार, शान्तिप्रियता इत्यादि नैतिक मूल्यों को उदघाटित करती है।

1 सर्वभूत मैत्री - वैदिक स्तोत्र सर्वभूत मैत्री का आदर्श अपने सम्मुख रखते हुए परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करता है-"हे ऋते! हे सबके मनों से विद्वेषादि भावों का निवारण करने वाले प्रभु! आज मैं मैत्री का व्रत ग्रहण कर रहा हूँ। उस पर दृढ रहने का सामर्थ्य मुझे प्रदान कीजिए। सब भूत मुझे मित्रों की दृष्टि से देखें, क्योंकि आज से मैं सब भूतों को मित्रों की दृष्टि से देखने लगा हूँ ।" इस प्रकार हम सभी मानव एक-दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखें। इस प्रकार हम सभी मानव एक-दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखा करें।

दृते दृहमा, मित्रास्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि
समीक्ष्यताम् ।
मित्रास्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे ।
मित्रास्य चक्षुषा समीक्षामहे ।।3

इस प्रकार मित्रता और सौहार्द का वेद यह उपाय बताते हैं कि हम दूसरों के प्रति अपने मन में मित्रता की भावना उत्पन्न कर लें। इसका प्रभाव उन पर यथासंभव पड़ेगा और वे हमारे प्रति अपने मन में सौहार्द का भाव धारण करने लगेंगे। जैसा कि समसामयिक परिस्थितियों में अत्यन्त आवश्यक है। वेद परस्पर देशों में बढ़ती असन्तोषजनक परिस्थितियों, हमलों, घात-प्रतिघात आदि से बचने के लिए विश्व में सर्वभूत मैत्री का सन्देश देते हैं। परिणामस्वरूप समस्त विश्व परस्पर मैत्री के सूत्र में आबद्ध हो जाएगा। अन्ततः वेद का यह आदर्श है कि सब दिशाएं हमारी मित्र हो कोई शत्रु न रहे।

2 सर्वसमृद्धि की कामना - वेद किसी एक व्यक्ति, एक समाज, अथवा राष्ट्र की ही नही अपितु समस्त मानव जगत की समृद्धि की कामना करता है। वह कामना करता है कि सकल दिशाएं सदैव उन्नति को प्राप्त करें। अथर्ववेद में कहा गया है -

इमा या पञ्च प्रदिशो मानवीः कृष्टयः ।
वृष्टे शापं नदीरिवेह स्फातिं समावहान्।।4

अथार्त् ये जो पांच प्रदिशाएं हैं, उनमें रहने वाले जो पांच मानव हैं, वे सभी दस प्रकार की समृद्धि को प्राप्त करें जिस प्रकार वर्षा होने पर नदियां जल प्रवाह को प्राप्त करती हैं।

3 एकता की भावना - वेदों में कई सौमनस्य विषयक सूक्त प्राप्त होते हैं, जिनमें परिवार, समाज, राष्ट्र तथा विश्व में सभी मानव प्रीतियुक्त मन से रहें।

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम् ।
देवा भागं यथा पूर्वे संजनाना उपासते ।।
समानि वः आकूतिः समाना हृदयानि वः ।
समानमंस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ।। 5

अर्थात हे मनुष्यों! तुम सब मिलकर चलो, मिलकर वार्तालाप करो, तुम्हारे मन मिल जाएँ। तुम उसी प्रकार मिलकर कार्यों को सिद्ध करो

जिस प्रकार विभिन्न क्षेत्रों में देव परस्पर सहयोग से कार्य करते हैं। तुम्हारा संकल्प समान हो, जिससे तुम्हारे में परस्पर रहने की शुभ प्रवृत्ति उत्पन्न हो।

4 अहिंसा- प्राणियों के प्रति सद्भावना और अहिंसा की भावना को ही देवताओं की कृपा प्राप्त करने का साधन माना गया है। ऋग्वेद के 7/20 में ऋषि चन्द्रदेव से प्रार्थना करते हुए कहते हैं कि हम आपकी सहानुभूति अहिंसक होकर प्राप्त करें-

वयं ते अस्यां सुमतौ च निष्ठाः स्याम वस्थे
अघ्नतो नृपतो।

सम्प्रति समस्त विश्व में अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण, परमाणु हथियार आदि बनाने की परस्पर देशों में प्रतिस्पर्धा लगी हुई है। इस प्रकार के परमाणु बमों का प्रयोग किया जा रहा है, जिससे सृष्टि का विनाश सम्भव है। परन्तु वेद को यह स्थिति वांछनीय नही है। वेद कहता है-

"यामिषु गिरिशन्त हस्ते विभर्श्यस्तवे ।
शिवां गिरित्रा ता कुरु मा हिंसीः पुरुष जगत्।।6

हे रुद्र! तुम्हें तो गिरिशन्त और गिरित्रा अर्थात् लोकरक्षक होना चाहिए। तुमने अपनी शक्ति के मद में आकर फेंकने के लिए जो अस्त्र धारण किए हुए हैं जो भंयकर अस्त्र हाथ में पकड़े हुए हैं, उन्हें शिव बना, उसका संसार के हित के लिए उपयोग कर, उनसे आप निरीह पुरुष व जगत का संहार मत करो ।"

5 ऋत और सत्य - वेदों में ऋत् एक अदभुत शब्द है जिसमे अनेक गम्भीर गूढ़ तथा महत्वपूर्ण अर्थ निहित किये हैं। इस विशाल जगत् अथवा ब्रहमांड की व्यवस्था के पीछे छिपे हुए अनन्त अटल नियम विधान को वेद में ऋत् शब्द से अभिहित किया गया है। ऋग्वेद में कहीं-कहीं ऋत् और सत्य को पर्यायरूप में भी प्रयुक्त किया गया है। ऋग्वेद सूक्त (10/190) में ऋत् और सत्य को सृष्टि का कारण भी कहा गया हैं तथा सत्य को विश्व के संचालक और प्रतिष्ठा का मूल तत्व माना गया है। यह पृथ्वी सत्य के कारण ही स्थिर है- सत्येनोत्तम्भिता भूमिः ।।"

वर्तमान सन्दर्भ में ऋत् और सत्य की अत्यन्त आवश्यकता अनुभव की जा रही है। सर्वत्र असत्य के बल पर मानव अपना आधिपत्य, दबदबा बनाए रख कर सफल बनना चाहता है, परन्तु अन्त में सत्य की ही जय होती है और असत्य की पराजय निश्चित है।

6 परोपकार - नैतिक तत्वों में सबसे महत्वपूर्ण परोपकार है। परोपकार से आशय है निर्बल, निर्धन तथा सामर्थ्यहीन की यथासम्भव सहायता की जाए। वेदों में भी नीति यत्र-तत्र प्रकीर्णित प्राप्त होती है। परोपकार और दान भारतीय संस्कृति के प्रमुख अंग हैं। वेद का आदेश है कि समृद्ध व्यक्ति निर्धन को दान करे। वेद की घोषणा है कि 'अकेला खाने वाला पाप का ही भागी होता है

-केवलाघो भवति केवलादी ।

अतएव वैदिक उपासक पूषा प्रभु से प्रार्थना करता है कि जिसकी दान की प्रवृति नही है उसे आप दान के लिए प्रेरित करें, कृपण के कठोर मन को मृदु करें-

अदित्सन्तं चिदाघृणे पूषन् दानाय चोदय ।
पणेश्चिद् विम्रदा मनः।।" 7

वर्तमान में परोपकार जैसे नैतिक तत्वों की महती आवश्यकता है। निर्धन देशों को सहायता देने के लिए, मात्र स्वार्थ की पूर्ति न कर सर्व कल्याण हेतु इस प्रकार के नीति तत्वों की आवश्यकता है। स्वतंत्राता के पश्चात् भी गरीबी देश की जटिल समस्या है। ऐसे स्थिति में देश को परोपकारी

लोगों की आवश्यकता है। जो देश की उन्नति में योगदान दे सकें।

7 शान्तिप्रियता - शान्ति को सर्वत्र अग्रणी मूल्य माना गया है। वेदों में शान्तिप्रियता को अभीष्ट तत्व माना गया है। सूक्तों में शान्ति का आह्वान किया गया है।

'शान्ति द्यौः शान्ति पृथिवी
शान्तमिदमुर्वन्तरिक्षम्।
शान्ति उदन्वर्तारापः शान्ता नः सन्त्वोषधीः ।।8

तेजोमय द्यौलोक हमारे लिए शान्ति का सन्देशवाहक हो। यह विस्तृत अन्तरिक्ष शान्ति की प्रेरणा दे। ये समुद्र की लहरें हमें शान्ति का गान सुनाए और ये प्रसूनों तथा फलों वाली औषधि-वनस्पतियां हमारे लिए शान्ति का राग गायें। वर्तमान में शान्ति की आवश्यकता प्रत्येक राष्ट्र को है। आतंकवाद जैसी भयंकर समस्या को दूर करने के लिए शान्ति उपयुक्त साधन है।

8 सदाचार - वैदिक संस्कृति में सदाचार एक महत्वपूर्ण तत्व है। हम द्वैत को मानने वाले हों अथवा अद्वैतवादी हों, परन्तु यदि हम सदाचारी नहीं तो मान्यतायें निरर्थक हैं। वेद कहता है- ऋतस्य पन्थानं तरन्ति दुष्कृतः।

अर्थात् दुराचारी सत्य के मार्ग को पार नहीं कर पाते हैं और जो सत्य के मार्ग पर आरुढ़ हैं, वह ईश्वर अवश्य ही प्राप्त कर लेगा। महर्षि वशिष्ठ ने भी कहा है - आचारः परमो धर्मः। आचार ही मनुष्य का परम धर्म है ।

वर्तमान समय के भौतिकवादी युग में नैतिक पतन, ईर्ष्या-द्वेष, स्पर्धा, व्यभिचार इत्यादि दुर्गुणों को दूर करने के लिए उपयुक्त साधन है- सदाचार।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि भौतिक विकास और नैतिक पतन का धनात्मक सम्बन्ध है। इसी कारण आज मानव दुःखों और अशान्ति से ग्रस्त है। चिन्ता, निराशा, कुंठा इत्यादि समस्याओं के पीछे नैतिक तत्वों के प्रति उदासीनता है। निश्चित ही आधुनिक मानव ने सत्ता और सम्पत्ति के मद में लोभ, मोह, अहंकार इत्यादि के कारण अपना विवके खो दिया है। हमें अपने जीवन में सदाचार को अपनाकर देश की उन्नति में सहयोग देना चाहिए। इससे न केवल देश का कल्याण होगा अपितु विश्वबन्धुत्व की अवधारणा का विकास होगा। वर्तमान में भी नीति तत्वों की महती आवश्यकता है क्योंकि संस्कृति रूपी भवन इसकी नींव पर ही खडा होता है।

संदर्भ ग्रन्थ

1 मनुस्मृति - 2
2 काव्यप्रकाश-1/2
3 यजवेदु 36/18
4 अर्थववेद 3/24/3
5 ऋग्वेद 10/191/2µ4
6 यजुर्वेद 16/3
7 ऋग्वेद 6/53/3
8 अर्थववेद 19/9/1